eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

कबीर का मानवीय चिंतन

[1]डॉ. धर्म विजय सिंह
[1]असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी, संजय गाँधी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चौकिया, सुल्तानपुर उत्तर प्रदेश

Received: 17 Dec 2023, Accepted: 15 January 2024, Published online: 01 February 2024

Abstract

हिंदी सन्त काव्य परम्परा अपनी रचनाधर्मिता, सामाजिक – सांस्कृतिक सरोकार, मूल्य चेतना और भावनात्मक सौंदर्य में अपूर्व है। इस काव्य की अपनी प्रभावोत्पादकता है क्योंकि यह उन सन्तों की रचना है जिन्होंने समकालीन सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था की विसंगतियों, अलगावों, असमानताओं, विरोधाभासों एवं द्वंदों को भोगा था। इस भोगे हुए यथार्थ का सर्वाधिक तीव्र स्वर कबीर का है।वे एक सामाजिक और मानवतावादी रचनाकार हैं। उन्होंने हिंदू – मुस्लिम संस्कृति की विसंगतियों पर समान रूप से प्रहार किया और सबसे ऊपर प्रेम पर आधरित मानव धर्म की स्थापना पर बल दिया और मानवता को शाश्वत धर्म के रूप में ग्रहण किया।

बीज शब्द– मानवता, प्रेम, सदभाव, सौहार्द, समदृष्टि, सदाचार, समन्वय।

Introduction

भारत ही नहीं अपितु वैश्विक संस्कृतियों में मानव धर्म को श्रेष्ठ घोषित किया गया है। मनुष्य होने के लिए देवता और पैगम्बर भी लालायित रहते हैं।कदाचित मनुष्य न होता तो देव, दानव, ईश्वर, अल्लाह, वाहेगुरू जैसी गरिमाओं को आकार कहाँ मिलता अतः स्पष्ट है कि मनुष्य सृष्टि की श्रेष्ठतम रचना है। कबीर मानवता के पर्याय हैं। मानवता की रचना जिन अमूर्त तत्वों से होती है उनमें करूणा, त्याग, प्रेम, क्षमा, ममता, सहिष्णुता, सेवा, विश्वास और समर्पण महत्त्वपूर्ण हैं। मनुष्य की श्रेष्ठता एक स्वीकृत सच्चाई है।'नहिं मनुष्यात श्रेष्ठतरम हि किंचित'जैसा प्रमाण एक ओर महाभारत में मिलता है तो 'शुन हे मानुष भाई। सबार ऊपरे मानुष सत्य, ताहार ऊपरे नाइ' कहकर वैष्णव सहजिया चंडीदास ने मानव–सत्य को सर्वोच्च स्थान दिया है। 'बड़े भाग मानुस तन पावा। 'कहकर गोस्वामी तुलसीदास ने मनुष्य जाति के भाग्य की सराहना की है।''मानुस जनम दुरलभ अहै होइ न दूजो बार'' कहकर मनुष्य–जीवन को सार्थक बनाने की सीख कबीर भी देते हैं।समग्र रूप में ,भारतीय साहित्य में मनुष्य जाति और उसके मानवीय सद्धर्म की स्वीकृति सर्वत्र मिलती है।

कबीर का काव्य मानव समाज और मानव जीवन से जुड़ा काव्य है।मनुष्य उनकी कविता का केंद्र बिंदु है। मानव को छोड़कर न तो वे समाज की मीमांसा करते हैं और न ही जीवन की।कबीर ने इसी जनसामान्य की शक्ति को आधार बनाकर मानवीय मूल्यों की निर्मिति की है। किसान–मजदूर की सामाजिक स्थिति को देखकर ही कबीर विद्रोही बन बैठे।मुल्ला और पुरोहितों के कर्मकाण्ड ने उनकी विद्रोही चेतना को और भड़काया। उन्होंने समाज के वर्गात्मक ढांचे का विरोध किया। उन्होंने देखा कि इस ढांचे के भीतर मानव मानव में भेद किया जाता है।उच्चवर्ग के लोग निम्नवर्ग के लोगों

©IJARMS JOURNAL, 2024

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

से पशुवत आचरण करते थे। एक मनुष्य के द्वारा दूसरे मनुष्य के प्रति किए गए अपमान को वे सह नहीं पाये। उन्होंने धर्मों के अनेक प्रचलित स्वरूपों की कमियों, विसंगतियों, अंतर्विरोधों और द्वन्दों को खुली आँखों से देखा। वे हिंदू–मुसलमान, सिख और ईसाई जैसे जाति–पांति के पचड़े में नहीं पड़ते।वर्ग,वर्ण,धर्म और दर्शन के भेदभाव और आचार–विचार से उनका कोई लेना देना नहीं।वे तो सच्चे रूप में एक मनुष्य हैं, ईश्वर भक्त हैं।ईश्वर ही उनकी जाति, वर्ग, वर्ण, धर्म और दर्शन की विकृतियों को कविता के माध्यम से जनसामान्य के सामने उजागर किया जिससे मनुष्यों के बीच से भेद–भाव की चेतना समाप्त हो जाय। वे स्वयं को''ना हिंदू ना मुसलमान''कहकर जाति–पाँति के भेद–भाव से ऊपर उठा लेते हैं। इस भेदभाव को नष्ट करने के लिए ही उन्होंने अपनी कविता की वस्तु के रूप में समकालीन सामाजिक और सांस्कृतिक कर्म की सारी प्रक्रिया को आत्मसात किया है।

उनका पूरा विश्वास है कि मानव का मानव से विवाद उसके अज्ञान का परिचायक है। ईश्वरीय रचना में तो सभी एक हैं, परन्तु आपसी विग्रह मनुष्य की देन है। जाति–पाँति, छूत–अछूत, छोटा–बड़ा, ब्राह्मण–शूद्र, मंदिर–मस्जिद जैसे विभाजन मानवीय विकृति के परिणाम हैं। कबीर ने बड़े करीब से अपने युग के विकृत समाज को देखा था। वे सतत सचेष्ट रहे हैं कि हर सम्प्रदाय, जाति, धर्म–समाज और राजनीति में समन्वय स्थापित हो ताकि उसके माध्यम से समग्र मानवता का सांस्कृतिक विकास सुनिश्चित किया जा सके।

कबीर का चिंतन है कि परमात्मा ने एक ही बूंद से सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की है। अतः ब्राह्मण और शूद्र जैसा भेद उनकी समझ से परे है–''एक बूंद तैं सृष्टि रची है, को बाभन को सूदा''वे मानवता के पोषक थे। कबीर ने अनुभव किया था कि हिंदू मुसलमान में कोई भेद नहीं है क्योंकि भेद होता तो इनकी जन्मविधि में अंतर होता। जिस मार्ग से हिंदू आया है उसी मार्ग से मुसलमान भी।जन्म के समय न तो कोई ब्राह्मण बनकर आता है न मुसलमान।

''जो तूं बाभन बभनी जाया तौ आन बाट होइ काहे न आया।
जो तूं तुरुक तुरकनी जाया तौ भीतरि खतना क्यों न कराया।''

व्रत, उपवास, तीर्थ, पूजा, नमाज, चमत्कार, सिर–मुण्डन, जटा–धारण, भस्म–लेप, पत्थर–पूजा, अजान, माला, छापा, तिलक, गंगा–स्नान आदि लोकरूढियों के विरुद्ध अपनी आवाज बुलंद की। कबीर चित्त की शुद्धता एवं हृदय की निर्मलता पर बल दिया जिसके बिना मनुष्य के सारे कार्य निर्रथक हैं।

कबीर के अनुसार यह सारा व्यक्त जगत एक ही तत्व से उत्पन्न है। इसलिए सभी प्रकार की भेद दृष्टि मिथ्या है। मानव –मानव में भेद तो परम अज्ञान का द्योतक है। इसी तत्त्व–दृष्टि से प्रेरित होकर कबीर ने जाति–पाँति, छुआ–छूत, ऊँच–नीच और ब्राह्मण–शूद्र के भेद का विरोध किया है। इसी आधार पर उन्हें समाज सुधारक समझा जाता है। इसमें संदेह नहीं कि इन भेदों को दूर कर देने पर एक सुंदर समाज की रचना हो सकती है। ऐसा समाज जिसमें ब्राह्मण शूद्र का भेद न हो,छुआछूत न हो,जाति पाँति न हो और मनुष्य मात्र समान समझें जायँ आज भी स्थापित नहीं हो

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

सका है। कबीर अपनी आध्यात्मिक प्रेरणा से मानवीय सत्य को स्थापित करना चाहते हैं। मानव को मानव के रूप में पहचान दिलाने के लिए समाज में व्याप्त विसंगतियों के जिम्मेदारों को कटघरे में खड़ा करते हैं और उनसे तर्क करते हैं कि यह भेद भाव क्यों किया जा रहा है। चूँकि कबीर ने ऐसे समाज में जन्म लिया जहाँ मनुष्य मनुष्य में जन्म के आधार पर भेदभाव किया जाता था। उन्होंने तत्कालीन समाज के सच का सामना किया था उसे भोगा था, इसलिये उनके हृदय में विद्रोह की ज्वाला धधक रही थी और उन्होंने सहज, सरल भक्ति की स्थापना के माध्यम से मानुष सत्य को स्थापित किया। मूलतः आध्यात्मिक–नैतिक चेतना से प्रेरित होने के कारण ही कबीर के मन में जिस आदर्श मानव की मूर्ति विराजमान थी वह एक सहज, नैतिक, सात्विक ईश्वर भक्त के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। कबीरदास ने भेद–भाव की समस्त सीमाओं को तोड़कर भक्त के रूप में जिस आदर्श मानव को सामने रखा है, वह मानव–व्यक्तित्व के विकास की सम्पूर्ण सम्भावना को समाप्त करके उसे ईश्वरत्व के स्तर तक पहुँचा देने वाला है। नर का नारायणत्व प्राप्त कर लेना ही सच्चा मानव–धर्म है। कबीर मनुष्य को उसी ऊंचाई पर देखना चाहते थे।मानव आत्मा जब विश्वात्मा में से अपना तादात्म्य कर लेती है तब मनुष्य सच्चे अर्थों में मानवधर्मा हो जाता है।विज्ञान अपने ज्ञान का विस्तार ग्रह–मण्डल या उससे भी परे स्थित लोकों तक कर सकता है किंतु धर्म अनिवार्यतः मानवता को ही केंद्र में रखकर चलता है। वह मनुष्य को ही उदात्त बनाता है। यह धर्म प्रेरित मानवता हमारी तार्किक चेतना को प्रदीप्त करती है, हमारे विवेक को प्रेरित करती है, हमारी प्रेम भावना को स्फूर्ति देती है और हमारे जीवन को बौद्धिक मर्यादा प्रदान करती है। कबीरदास जी का मानवीय चिंतन मनुष्य के बाह्य जीवन को नैतिक आचरण की मर्यादा में बांधने वाला, उसके मन का परिष्कार करने वाला और उसकी आत्मा को विश्वात्मा में लय करके उसे सच्चे मानवधर्म की ऊँचाई तक पहुँचाने वाला है।

सचमुच कबीर महामानव थे। मानवता–पोषक किसी भी जाति धर्म से उनकी मित्रता हो सकती थी और मानवता विरोधी से विरोध। एक ओर पंडित और योगी को फटकारने में उनसे चूक नहीं होती तो दूसरी ओर मौलवी और फकीर की खबर लेने में उन्हें गर्व का अनुभव होता था। कबीर तत्कालीन समाज के भुक्तभोगी थे रूढ़ि सम्मत सामंती दुराचारों और युगधर्मी मानवीय विसंगतियों से लड़ना उनकी आदत बन चुकी थी। आदर्श मानव समाज की स्थापना के लिए वे विकल थे।

कबीर ने हिंदू धर्म और इस्लाम धर्म की विसंगतियों, न्यूनताओं, द्वंद्वों को समाप्त करने के लिए ही 'मानव धर्म' को नए सिरे से विस्तार दिया था। उन्होंने जनता को समझाया कि ईश्वर न तो काबे में है न कैलाश में,न मंदिर में न मस्जिद में,वह तो तुम्हारे भीतर स्थित है। उसे बाहर खोजना व्यर्थ है–

''मोको कहाँ ढूँढते बन्दे,मैं तो तेरे पास में।
न मैं मंदिर न मैं मस्जिद न काबे कैलास में।।''

भक्ति को कबीर ने मानव मूल्य के रूप में प्रस्तुत किया।कबीर के समय धर्म, दर्शन, कला, साहित्य, संस्कृति, राजनीति और समाजनीति सभी का सामन्तीकरण हो गया था। वे इस सारी सामंती व्यवस्था से मुक्ति चाहते थे,व्यक्तिगत रूप से नहीं, सामाजिक रूप से। उनकी सामाजिक नीति तुलसी के

eISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 07, Special Issue 01, February 2024

रामराज्य की नीति से मेल नहीं रखती। वे एक वर्णहीन, जातिहीन और शोषणहीन समाज की संरचना करना चाहते थे। कबीर ने भक्ति और प्रेम को मानवी मूल्यों में सर्वोपरि बतलाया है। उन्होंने इन दोनों मूल्यों को सामाजिक आधार प्रदान किया। कबीर इस प्रेममूलक भक्ति के माध्यम से अहंकार, घृणा, हिंसा, दैन्य, विषय–वासना एवं चिंता–दुःख के विष को दूर करके सबके बीच प्रेम स्नेह के मधुर स्निग्ध सम्बन्ध की स्थापना करना चाहते हैं। प्रेम कबीर के जीवन दर्शन का मूल तत्व है जिसके द्वारा वे ईश्वर साधक ,ब्राह्मण शूद्र, उच्च निम्नवर्ग के भेदभाव को नष्ट कर मनुष्य को मनुष्य बनाता है।

वस्तुतः कबीर ने अपने युग के प्रचलित सभी मतों से सारतत्व ग्रहण करते हुए उसे अपने अनुभव के धरातल पर प्रभावशाली ढंग से उतारने की कोशिश करते हैं। समाज में व्याप्त अंधविश्वास और भेद–बुद्धि के प्रति सन्तों की चिंता ने शुद्ध मानववाद का प्रचार किया। सभी को ईश्वर की सन्तति समझना, मनुष्य मात्र को समान जानना, जाति और लोकधर्म के विभेद से मुक्त रहना तथा कुल मिलाकर उदार मानवतावादी दृष्टि को वाणी देना कबीर का मुख्य उद्देश्य था।इस तरह की समत्व दृष्टि और भातृत्व भावना का प्रथम रूप कबीर में लक्षित होता है।लोकोन्मुखता, मानवीयता और सामाजिक एकीकरण जैसी आदर्श भावनाओं के पवित्र ध्वज का कबीर ने उन्नयन किया है और इसीलिए हिंदी साहित्य में मानवता के प्रथम कवि के रूप में उनकी प्रतिष्ठा की जानी चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ–

1–द्विवेदी आचार्य हजारी प्रसाद,हिंदी साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–2006
2–सिंह,बच्चन, हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–2006
3–द्विवेदी, आचार्य हजारी प्रसाद,कबीर, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण–1999
4–तिवारी, रामचंद्र, कबीर मीमांसा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण–2003
5–चतुर्वेदी, रामस्वरूप, हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण–2001
6–सिंह, वासुदेव, कबीरःसाहित्य और साधना, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण–2004
7–तिवारी, पारसनाथ, कबीर वाणी सुधा, राका प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण–2003